International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 22-06-2021, Accepted: 06-07-2021, Published: 23-07-2021
Volume 7, Issue 4, 2021, Page No. 52-56

हिंदी उपन्यासों में सिसकता भारतीय कृषक-जीवन

श्री कृष्ण कुमार शर्मा
शोधार्थी, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान (विश्व विद्यालय विभाग), दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा मद्रास स्नातकोत्तर केन्द्र, धारवाड़, कर्नाटक, भारत

सारांश

मुझे अच्छी तरह से याद है कि बचपन में हम सभी को यही पढ़ाया और सिखाया जाता रहा है कि "हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है |" निश्चित रूप से भारत एक कृषि प्रधान देश है | आज के युग में हम अपने चारों ओर देखें तो खुद के बचपन से अब तक के जीवन में समाज, विचार, परिस्थितियाँ सभी कुछ बदल गई हैं | यदि नहीं बदली तो देश के अन्नदाता किसान की स्थिति और उनका शोषण | हाँ इतना जरूर हुआ है कि आज के किसान के शोषक कोई जमीदार या साहूकार कम ही होते हैं | आधुनिकीकरण और औधोगिकीकरण के नए रूप की चकाचौंध और कुछ मजबूरियों ने किसान जीवन को पूरी तरह से नए शोषकों और नई समस्यों के आधीन कर दिया है | आज का किसान अनेकों संघर्षों से रोज ही दो-चार हो रहा है | देश के विभिन्न राज्यों से किसानों के आत्महत्यों की खबरें आती है ज्यादातर इन आत्महत्याओं के पीछे कर्ज का ही दुष्चक्र रहता है | आज महाजन और जमीदार बदल गए हैं उनकी जगह बैकों तथा स्थानीय पूँजीपतियों ने ले लिया हैं | आज के परिवेश में कहीं किसानों की जमीने विकास के नाम पर छीनी जा रही हैं तो कहीं पर बीज और खाद के लिए घूसखोरी के रूप में उनका शोषण हो रहा है | अगर इन सब से ऊपर उठकर यदि किसान कठिन मेहनत करके फसल तैयार करते हैं और उसे बाजारों में बेचना चाहते हैं तो बाजारवादी व्यवस्था, सरकारी नीतियाँ यह सब किसानों के लिए बहुत ही कष्टदायक सिद्ध हो रही हैं | विडम्बना यह है कि देश का अन्नदाता किसान स्वयं आज भूखा है |

मूलशब्द: अन्नदाता, आधुनिकीकरण, औधोगिकीकरण, किसान-शोषण, बाज़ारवाद, सरकारी नीतियाँ

प्रस्तावना

शोध विधि

यह शोध-पत्र पूर्णतया नवीनता युक्त है | जो कि विभिन्न स्रोतों तथा अधिकारिक वेबसाइट पर आधारित है | इस शोध-प्रपत्र में हिंदी उपन्यासों में निहित किसान जीवन को आधुनिक विकासमय वातावरण के किसान जीवन और उनकी समस्यओं को समेलित एवं चिन्हित कर उन्हें प्रकाश में लाने का एक प्रयास किया गया है |

शोध-विवरण

साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है | हिंदी साहित्य में गद्य की विभिन्न विधाओं के साथ ही उपन्यास विधा का भी आरम्भ आधुनिक काल अर्थात भारतेंदु युग से माना जाता है। समय-समय पर उपन्यासकार भारतीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियों का चित्रण उपन्यास में करते रहे हैं । निश्चित तौर

पर मुंशी प्रेमचंद, भगवानदास, राजू शर्मा, जगदीश गुप्त, विवेकी राय, कमलाकांत त्रिपाठी, काशीनाथ, संजीव और पंकज आदि ने किसानों की स्थिति और समाज के वैचारिक मतभेदों एवं अन्य कुरीतियों को अपने साहित्य में स्थान दिया है तो यह उस समय की स्थिति बयाँ करती हैं |

जहाँ पहले देश में किसानों की आत्महत्या की ख़बरें महाराष्ट्र के विदर्भ और आंध्र प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र से ही आती थीं, वहीं अब इसमें नए इलाक़े जुड़ गए हैं | इनमें बुंदेलखंड जैसे पिछड़े इलाक़े नहीं, बल्कि देश की हरित क्रांति की कामयाबी में अहम भूमिका वाले हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे राज्य भी शामिल हैं | इसके अलावा औद्योगिक और कृषि विकास के आंकड़ों में रिकॉर्ड बनाने वाले गुजरात के क्षेत्र में भी किसानों के आत्महत्याओं की ख़बरें शामिल हैं | राजस्थान और मध्य प्रदेश के किसान भी अब आत्महत्या जैसे घातक क़दम उठा रहे हैं |

अगर यही हम आज के कई साल पहले हिंदी साहित्य के उपन्यासों में देखें तो किसानों के जीवन में क्या-क्या मुश्किलें थी ? उनका जीवन कैसे चलता था ? इन सब का उत्तर मिल जाता है और यदि उसको आज के परिवेश में रखकर देखते हैं तो बहुत कुछ नहीं बदला है | हिंदी उपन्यास के इतिहास में जहाँ तक किसानों की दयनीय स्थिति, कर्ज की समस्या तथा किसानों के प्रति हो रहे शोषण की अभिव्यक्ति का प्रश्न है तो मुंशी प्रेमचन्द का नाम लिया जाता है । इन्होंने अपने उपन्यास 'गोदान' और 'प्रेमाश्रम' में सामन्ती और महाजनी व्यवस्था के शिकार किसानों की दयनीय स्थितियों का चित्रण किया है।

गोदान महाकव्य का नायक 'होरी' है जो खेतों में जीतोड़ मेहनत करने के बाद भी अपने परिवार वालों का भरण-पोषण बड़ी मुश्किल से कर पाता है। भारतीय समाज में व्याप्त सामंती और सूदखोरी जैसी कुव्यवस्थाओं का शिकार 'होरी' होता है। नजराना देने के बाद भी जब होरी रायसाहब के यहाँ बेगार करने जाता है तो मुन्नी कड़े शब्दों में विरोध करती है। फिर भी सामाजिक परंपरा में बंधा होरी उसकी एक नहीं मनाता। अंततः होरी अपने खेतों में काम करते- करते प्राण त्याग देता है। ऐसी स्थिति केवल एक होरी की ही नहीं है बल्कि कई होरी इस समाज में कर्ज भरा जीवन जी रहें है। गोदान उपन्यास किसान जीवन के अंदरूनी तह को परत-दर-परत खोलता है। किसानों से लगान इतना अधिक लिया जाता था कि इन पंक्तियों से समझा जा सकता है -

> अहा विचारे दुःख के मरे निसिदिन पच पच मरे किसान।
> जब अनाज उत्पन्न होय तब सब उठवा ले जाय लगान।।
>
> --- बालमुकुन्द गुप्त

'फाँस' उपन्यास कथाकार संजीव द्वारा लिखित है जो महाराष्ट्र राज्य के विदर्भ क्षेत्र में निवास करने वाले किसानों के जीवन तथा उनके जीवन में आने वाली तमाम विनाशकारी समस्याओं पर आधारित है। यह उपन्यास सबका पेट भरने वाले और तन ढकने वाले देश के लाखों किसानों द्वारा किए जा रहे आत्महत्या पर केन्द्रित है। यह कहा जाता रहा है कि भारत किसानों का देश है और भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। यहाँ आधे से अधिक जनता कृषि पर निर्भर रहती है। विगत कुछ दशकों से इस देश में किसान आत्महत्या तेजी से हो रही है। परिस्थितिवस किसान लगातार आत्महत्या कर रहे हैं। जिस त्रिवेणी कि मै बात करना चाहता हूँ। उसमे तीन उपन्यास- गोदान, फ़ांस और अकाल में उत्सव. तीनों उपन्यास आत्महत्या पर केन्द्रित है।

उपन्यासों में किसान जीवन की अभिव्यक्ति की अगली कड़ी में पंकज सुबीर का 'अकाल में

उत्सव' उपन्यास है जो गाँव और किसानी संस्कृति का एक बहुत ही बेहतरीन उपन्यास है। किस प्रकार किसान महाजनी, सामंती व्यवस्था सूदखोरी और कर्ज के दलदल में फंसकर आत्महत्या करने पर विवश हो रहा है। पंकज सुबीर के इस उपन्यास को पढ़ते समय प्रेमचन्द के उपन्यास गोदान और गबन की याद दिलाती है। दरअसल प्रेमचन्द के समय में किसान के समक्ष जो समस्याएं थी चाहे वह ऋण सम्बन्धी समस्याएँ हो या किसानों की बदहाली सम्बन्धी अन्य समस्याएँ हो उसी कड़ी या परम्परा को उपन्यास जगत में आगे बढ़ाने का काम पंकज सुबीर ने किया है। अकाल में उत्सव उपन्यास का ताना बना मुहावरों और कहावतों से बुना गया है। इस उपन्यास को आलोचकों ने अपने अपने तरीके से व्याख्यायित किया है। नासिरा शर्मा ने इसे 'प्रेमचन्द का गाँव एक नई भाषा शैली में फिर से जिन्दा हो उठा' कहा है, महेश कटारे ने 'भारतीय किसान के जीवन का शोकगीत', डॉ. पुष्पा दुबे ने 'कंपकंपाती लौ और थरथराते धुंएँ की दुःख भरी कहानी' कहा, ब्रजेश राजपूत ने 'किसानों के दुःख दर्द का बेचैन करने वाला किस्सा' कहा, ओम शर्मा ने 'आज के किसान की जिंदगी का सच्चा दस्तावेज़ कहा। मेरे हिसाब से यह उपन्यास 'किसान की बदकिस्मती का जीता जागता आईना' है। ऐसा आईना जिसमें किसानों की दयनीयता को देखा जा सकता है। एक बार फिर से पंकज सुबीर ने गंवाई जीवन शैली और किसान आत्महत्या जैसे विषय को कथा साहित्य में पाठकों, आलोचकों और समीक्षकों को सोचने पर मजबूर करता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि और किसान है। किसानों की उन्नति से ही देश की उन्नति संभव है। किसान पूरे देश का अन्नदाता है। वैश्वीकरण के दौर में उसकी भी स्थिति में सुधार होगा ऐसा लगा था। लेकिन आज के बाजारवादी दौर में वह हाशिए पर चला गया है। उसकी फ़सल सामाजिक समस्या बन गयी है। उसे अपनी फ़सल का उचित मूल्य नहीं मिल रहा है। कर्ज की समस्या से वह घिरा हूआ है। खाद, बिजली और पानी की समस्याएँ उसे परेशान कर रही हैं। उसका कई आयामों पर शोषण हो रहा है। आजादी के पहले शोषकों को किसान समझ सकता था। लेकिन आज उसका चालाकी से शोषण किया जा रहा है। इससे शोषकों को पहचानना भी मुश्किल हूआ है। आजादी के इतने साल बीत जाने पर भी किसानों को न्याय नहीं मिल पा रहा है। वह समस्याओं के मकड़ जाल में घिरा हूआ है। कभी प्राकृतिक आपदाएं तो कभी सरकारी नीतियों से वह परेशान हो रहा है। उसकी फ़सल को उचित मूल्य न मिलना भी आज एक गंभीर समस्या हो चुकी है। अच्छे बीजों की उपलब्धता और वितरण की असमानता की समस्या ने भी किसानों का जीना मुश्किल किया है। किसानों के लिए सारे हालात ऐसे हैं कि "जिंदा कैसे रहा जाए ?" इस स्थिति में वह फांसी के फंदे को अपनाकर आत्महत्या कर रहा है। अब तक तीन लाख से अधिक किसानों ने आत्महत्याएँ की हैं। किसान आत्महत्या आज चिंता का विषय बना है और वह भी विशेषकर कृषिप्रधान देश में ! 'भारत एक कृषि प्रधान देश है' यह उक्ति इतनी ज्यादा चलन में आ गयी की खेती, किसान और उससे जुड़े लोग सरकार की नीतियों में कहीं जगह नहीं पा सके। किसानों के संबंध में सरकार की घोषणाएँ या तो फाइलों में बंद हो जाती हैं या बिचौलियों तक ही सिमट कर रह जाती हैं। किसानों के संबंध में सरकार की योजनाएं वैसे भी कारगर नहीं रही हैं फिर भी जो योजनाएं बनाई गई उसका क्रियान्वयन सही ढंग से नहीं हो पाया। परिणामस्वरूप खेती की नई-नई विधियों की जानकारी के आभाव में एवं दिन-प्रतिदिन खाद एवं बिजली के मूल्यों में बढ़ोत्तरी होने के कारण

किसान खेती से लागत का मूल्य भी नहीं निकाल पाता हैं। आज किसानों के समक्ष अशिक्षा, गरीबी, भुखमरी एवं आत्महत्या जैसी अनेक समस्याएँ मुँह बाये खड़ी हैं। देश की लगभग आधी फीसदी से ज्यादा आबादी सरकार और समाज दोनों के यहाँ हशिएँ पर है। अगर साहित्य की बात करें तो स्वतंत्रता के बाद किसान जीवन की समस्याओं को लेकर उस लेखन के कलेवर का अभाव है जो प्रेमचंद के यहाँ दिखता है। प्रेमचंद के बाद अनेक रचनाकारों ने किसानों की समस्याओं को लेकर उपन्यास लिखे हैं, उनमें समकालीन कथाकार शिवमूर्ति के उपन्यास 'आख़िरी छलांग', संजीव का 'फांस' तथा पंकज सुबीर का उपन्यास 'अकाल में उत्सव' उल्लेखनीय हैं।

आचार्य विनोबा भावे सामाजिक समानता स्थापित करना चाहते थे। इसके लिए भारत के कई संस्थाओं के संगठनों द्वारा भूदान करने हेतु लोगों को प्रेरित किया गया। इसका प्रभाव अपने देश तक ही सीमित न रहकर विदेशों में भी पड़ा। यहाँ के लोगों को विदेशों में भी बुलाया जाने लगा। रामलोटन जैसे किसानों को दिखाया गया है जो सामाजिक एकता स्थापित करते हुए अपने जमीन को दुबे महाराज के चंगुल से छुड़ाने के लिए हिंसा का सहारा लेता है। इस सन्दर्भ में मंत्री जी का कहना है कि, "रामलोटन और उसके साथी किसानों ने आज अपने खेतों में हल चलाया है। उन पर पिछले तीन-चार साल से दुबे महराज खेती कर रहा था। थाने से छूटने के बाद वह कुछ दिन के लिए शहर चला गया है। उसकी गैरमौजूदगी में किसान ने अपने खेत पर कब्जा कर लिया है। दुबे महराज के आदमियों ने उन्हें रोकना चाहा था, इसी झगड़े में दोनों पक्षों के बीच जमकर मारपीट हुई है। कोई मरा नहीं है पर कई लोग घायल हुए हैं। थाने में दोनों ओर से रिपोर्ट हुई है। पुलिस ने अभी किसी को गिरफ्तार नहीं किया है पर कई लोगों को थाने पर बैठा रखा है।" इस तरह निम्न जाति के लोग भी सामाजिक एकता स्थापित कर अपने अधिकारों की माँग हेतु आन्दोलन करते नजर आ रहें हैं। आजादी के बाद हमारे देश से तो जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई लेकिन आज भी पूंजीपतियों का वर्चस्व समाज में बना हुआ है। जिन गांवों में आज तक सिंचाई का समुचित प्रबंध नहीं हो पाया है उन क्षेत्रों का विकास नहीं हो पाया है। किसानों द्वारा बैंक से ऋण नहीं लिए जाने के कारण भी उनकी स्थिति खराब होती जा रही है। पूंजीपतियों द्वारा किसानों को कर्ज के जाल में फँसाया जा रहा है। किसान पूंजीपतियों के चंगुल में इसलिए फँसते हैं क्योंकि सरकारी बैंकों द्वारा किसानों से इतने कागजादों की माँग की जाती है कि वे परेशान होकर किसी महाजन से कर्ज ले लेते हैं। अगर किसान की लागत मूल्य से अधिक फसल से प्राप्त न हो तो उनके द्वारा ली गई ऋण को माफ़ कर दिया जाय। सरकार द्वारा जितने भी किसानों से संबंधित योजनाएं हैं उनका समुचित लाभ किसानों को प्राप्त हो इसके लिए गांवों में किसानों के लिए सूचनाओं को प्रसारित किया जाय। इससे हमारे देश के किसानों के अन्दर एक नयी चेतना जागृत होगी जिससे वे परेशान होकर आत्महत्या नहीं करेंगे।

निष्कर्ष

गोदान, फाँस और अकाल में उत्सव इन तीनों उपन्यास में किसानों की संघर्ष की कारुणिक कहानी है | आज का किसान महाजनी या जमींदारी व्यवस्था का शिकार है तो कहीं वह सरकारी बैंकों से लिया गया कर्ज का। कर्ज की अदायगी न होने के कारण किसान आत्महत्या कर रहा है इन त्रासदियों की घटनाचक्र की सम्पूर्ण सामजिक विडम्बनाओं के साथ शब्दबद्ध किया गया है। वह सिर्फ हमारी संवेदना को झकझोरता ही नहीं बल्कि उपन्यास को एक कलात्मक ऊँचाई

भी प्रदान करता है। देखा जाय तो आज भी सामंती और पूंजीवादी संस्कृति की टकराहट में किसानी संस्कृति पिस रही है। इसका इतना बड़ा दुष्परिणाम है यही है कि वर्तमान समय में किसान लाखों की संख्या में आत्महत्या कर रहे हैं।

आज यही लेखक साहित्यकार इस राजनीति का विरोध करते हैं और अपनी रचनाओं के माध्यम से उसका प्रतिकार भी करते हैं। आज के लेखक के सामने प्रेमचंद का समय, ग्राम और जीवन नहीं है,शायद इसलिए भी प्रेमचंद होना कठिन भी है। किन्तु संतोष और आशा भी है कि प्रगतिशील, जनवादी लेखक अपनी लेखकीय प्रतिबद्धताओं के साथ आज किसानों कि समस्याओं को लेकर लगातार अपनी लेखनी के साथ उपस्थित हैं।

संदर्भ सूची

1. गोदान - प्रेमचन्द- सुमित्र प्रकाशन इलाहाबाद
2. भारतीय समाज- के.एल. शर्मा- एन सी ई आर टी, 12 वीं कक्षा
3. पाहीघर- कमलाकांत त्रिपाठी- राजकमल प्रकाशन
4. फाँस - संजीव - वाणी प्रकाशन
5. हिंदी उपन्यासों में चित्रित कृषक जीवन - डॉ कुट्टे धनाजी सुभाष
6. इंटरनेट संचार माध्यम।